SS-6

अंक-2, दिसम्बर 2021

ISSN-2454-8286

शोध-मनीषा

(शोध-पत्रों तथा आलेखों का पूर्व समीक्षित वार्षिक संकलन)

सम्पादक

प्रो. सतीश कुमार राय

विश्वविद्यालय हिन्दी-विभाग

बाबासाहेब भीमराव अम्बेदकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

Ss-6

शोध-मनीषा

(शोध-पत्रों तथा आलेखों का पूर्व-समीक्षित वार्षिक संकलन)

अंक–2 दिसंबर, 2021 ISSN-2454-8286

संपादक

प्रो. सतीश कुमार राय

कार्यकारी संपादक

प्रो. कल्याण कुमार झा

प्रकाशक

विश्वविद्यालय हिंदी विभाग

बाबासाहेब भीमराव अंबेदकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

संपादक-मंडल
प्रो. त्रिविक्रम नारायण सिंह
डॉ. वीरेंद्रनाथ मिश्र
डॉ. उज्ज्वल आलोक
डॉ. सुशांत कुमार
डॉ. संध्या पांडेय
डॉ. पुष्पेंद्र कुमार

प्रबंध संपादक
डॉ. राकेश रंजन

विभागीय शोध-पत्रिका
ISSN : 2454-8286
प्रकाशन-वर्ष : 2021
मूल्य : 200 रुपये
अक्षर-संयोजन : एस. कुमार
आवरण : विभांशु राज
मुद्रक : बी.के. ऑफसेट, दिल्ली-32

परामर्शक-मंडल

प्रो. प्रमोद कुमार सिंह
कृतकार्य अध्यक्ष, विश्वविद्यालय हिंदी विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।
प्रो. चितरंजन मिश्र
पूर्व प्रतिकुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र।
प्रो. अनिल राय
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर।
प्रो. चंद्रकला त्रिपाठी
अवकाशप्राप्त प्राफेसर, हिंदी विभाग, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी।
प्रो. सदानंद शाही
हिंदी विभाग, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी।
प्रो. कालीचरण स्नेही
विभागाध्यक्ष, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।
प्रो. पवन अग्रवाल
हिंदी विभाग एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।
प्रो. सत्यकेतु सांकृत
मानविकी संकायाध्यक्ष, अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली।
प्रो. मुक्तेश्वरनाथ तिवारी
अध्यक्ष, हिंदी भवन, विश्वभारती शांति निकेतन, प. बंगाल।
प्रो. चंद्रभानु प्रसाद सिंह
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।
प्रो. तरुण कुमार
अध्यक्ष, हिंदी विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
प्रो. जंगबहादुर पांडेय
पूर्व अध्यक्ष, राँची विश्वविद्यालय, राँची।
प्रो. राजेंद्र साह
अध्यक्ष, हिंदी विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।
प्रो. अनीता
अध्यक्ष, हिंदी विभाग, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा।
प्रो. सत्यप्रकाश त्रिपाठी
अध्यक्ष, हिंदी विभाग, बी.एन.के.बी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अकबरपुर, अंबेदकरनगर (उत्तर प्रदेश)।

अनुक्रम

संपादकीय	: सतीश कुमार राय	07
हिंदी का सबसे नामवर समालोचक	: प्रो. रेवती रमण	09
वाल्मीकि और उनकी रामायण	: प्रो. परशुराम राय प्रेम प्रभाकर	19
आधुनिक हिंदी काव्य में नव-वैष्णवता और माखनलाल चतुर्वेदी	: प्रो. चंद्रभानु प्रसाद सिंह	22
प्रेमचंद की कहानियों में दलित मुक्ति का स्वर	: प्रो. दीपक प्रकाश त्यागी	29
दलित साहित्य : अवधारणा एवं प्रकृति	: डॉ. नरेंद्र कुमार	40
सदियाँ बोल रही हैं (संदर्भ : लैंगिक असमानता)	: प्रो. पूनम सिन्हा	44
आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का काव्य-चिंतन	: प्रो. सत्यप्रकाश त्रिपाठी	48
कवि दिनकर : आरंभ और आरंभिक पहल	: डॉ. वीरेंद्र कुमार सिंह	54
हिंदी नवजागरण और आचार्य रामचंद्र शुक्ल	: डॉ. आलोक कुमार सिंह	60
हिंदी शोध एवं समालोचनापरक साहित्यिक पत्रकारिता	: प्रो. कल्याण कुमार झा	71
राष्ट्रकवि दिनकर के काव्य में राजनीतिक संस्कृति	: डॉ. सिद्धेश्वर प्रसाद सिंह	75
राजेश जोशी : अनिवार्य प्रश्नों के संवेदनशील कवि	: डॉ. राकेश रंजन	80
भुवनेश्वर : "विसंगत भूमि पर बिखरा प्रातिभ पारा"	: डॉ. संजय कुमार यादव	83
शमशेर की कविताओं को पढ़ने के खतरे	: डॉ. मानस कुमार	90
स्त्री चेतना का इतिहास, भूगोल और समाजशास्त्र	: डॉ. सुधा उपाध्याय	93
स्त्री चिंतन और वैदिक ऋषिकाएँ	: डॉ. कुमारी सीमा	101
हिंदी नाट्य साहित्य में सूत्रधार की बदलती अवधारणा	: प्रो. शेखर शंकर मिश्र	105
युगांतर की चेतना और गोपाल सिंह 'नेपाली'	: डॉ. उज्ज्वल आलोक	108
साक्षात्कार की विकास यात्रा और उसका स्वरूप	: डॉ. माधव कुमार	111
महाभोज : भारतीय स्वातंत्र्योत्तर राजनीति की अंतर्कथा	: डॉ. सुशांत कुमार	116
ग्लोबल बाजार में 'रेहन पर रग्घू'	: डॉ. पवन कुमार	119
सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में प्रेम : विशेष संदर्भ 'रति का कंगन'	: डॉ. सुनील कुमार	124
अज्ञेय चालीसा एवं अन्य दुर्लभ कविताएँ (मुद्राराक्षस : प्रयोगवाद और अज्ञेय की आलोचना)	: डॉ. संदीप कुमार सिंह	127
भूमंडलीकरण के दौर में बाल साहित्य : चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ	: डॉ. संध्या पांडेय	134
'पावभर जीरे में ब्रह्मभोज' : आत्मकथ्य की सार्थक अभिव्यक्ति	: डॉ. हेमा कुमारी	139
केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति और परिवेश	: प्रो. कमलेश कुमार गुप्त	144
स्त्री विमर्श के काव्य मूल्य	: डॉ. श्रीनारायण समीर	149
राष्ट्रीय एकता और हिंदी	: प्रो. पवन अग्रवाल	159
दिनकर की आधुनिक भारत की संकल्पना	: प्रो. त्रिविक्रम नारायण सिंह	164
नवजागरणकालीन प्रेस कानून एवं उसके प्रभाव	: डॉ. पुष्पेंद्र कुमार	171
कहानीकार अज्ञेय	: डॉ. साक्षी शालिनी	177
नाटककार प्रताप नारायण मिश्र	: डॉ. रश्मि कुमारी	179
नामवर सिंह का कविकर्म	: समीक्षा सुरभि	182
कहानीकार रेणु	: शारदा सिन्हा	186
अनंतर		
फिर मंदार मंथन से सांस्कृतिक-पुरातात्त्विक अमृत संभव	: सतीश कुमार सिंह	188
यातनाओं का दस्तावेज : कोरजा (पुस्तक-समीक्षा)	: डॉ. चित्तरंजन कुमार	192
पुस्तक-चर्चा	: प्रो. सतीश कुमार राय	195

ISSN-2454-8286

युगान्तर की चेतना और गोपाल सिंह 'नेपाली'

डॉ. उज्ज्वल आलोक
सहायक प्रोफेसर, विश्वविद्यालय हिंदी विभाग,
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
मो. : 9650202423

गोपाल सिंह 'नेपाली' का जन्म एक ऐसे देश में हुआ था, जो अपनी मुक्ति के लिए लगातार संघर्ष कर रहा था। बिहार के वर्तमान जिले पश्चिम चंपारण के बेतिया में 11 अगस्त, 1911 को जन्मे गोपाल सिंह 'नेपाली' की काव्य-यात्रा का आरंभ नंदकिशोर नंदन ने सन् 1927 से माना है,[1] जबकि डॉ. सतीश कुमार राय के अनुसार 'नेपाली' की काव्य-प्रतिभा का प्रस्फुटन सन 1929 से हुआ। डॉ. राय ने इस तथ्य को रेखांकित करते हुए लिखा है कि "वीरन जी के साहचर्य में 'नेपाली' की काव्य-प्रतिभा प्रस्फुटित हुई और 1929 ई. से ही वे काव्य-रचना करने लगे। उनकी पहली रचना 'भारत-गगन के जगमग-सितारे' बाल मासिक पत्रिका 'बालक' के नवम्बर 1930 ई. के अंक में प्रकाशित हुई।... 1931 ई. में मोतिहारी से प्रकाशित 'विकाश' पत्रिका के कई अंकों में इनकी बाल-कविताएँ प्रकाशित हुईं।"[2]

महज दो वर्षों में नेपाली जी राष्ट्रीय स्तर के साहित्य सम्मेलनों में भाग लेने लगे। सन् 1931 में अखिल भारतीय स्तर के साहित्य सम्मेलन के दौरान उनकी मुलाकात शिवपूजन सहाय, रामबृक्ष बेनीपुरी, रामधारीसिंह 'दिनकर' और बनारसीदास चतुर्वेदी से हुई। वहाँ से वापस बेतिया आकर 'नेपाली' ने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर 'कविवासर' नामक साहित्यिक संस्था की स्थापना की। इस संस्था के साथ 'नेपाली' ने सन् 1932 में एक हस्तलिखित पत्रिका 'प्रभात' तथा टाइप की हुई 'द मुरली' (अंग्रेजी पत्रिका) का संपादन किया।[3]

सन् 1932 में द्विवेदी-मेला में काव्यपाठ के दौरान उनकी मुलाकात प्रेमचंद से हुई। उनकी कविता से प्रभावित होकर प्रेमचंद ने पूछा कि "बरखुरदार कविताई क्या माँ के पेट से सीख कर आए हो!"[4] इस आयोजन में उनकी मुलाकात दुलारे लाल भार्गव से भी हुई, जिन्होंने नेपाली को 'सुधा' पत्रिका के संपादन विभाग में सहयोग के लिए आमंत्रित किया। यहीं रहते हुए उन्होंने अपने काव्य-संग्रह 'पंछी' को अन्तिम रूप प्रदान किया। हालाँकि 'पंछी' से पहले 'उमंग' का प्रकाशन हुआ। 'पंछी' का प्रकाशन गंगा पुस्तकमाला लखनऊ से 166वें पुष्प के रूप में हुआ, जिसकी भूमिका निराला ने लिखी।

सन् 1934 में 'नेपाली' ऋषभचरण जैन के संपादन में दिल्ली से प्रकाशित होने वाले विविध-विषय-विभूषित सिनेमा प्रधान साप्ताहिक 'चित्रपट' के सहायक संपादक बने। ऋषभचरण जैने के सौजन्य से इनका पहला काव्य-संग्रह 'उमंग' अप्रैल 1934 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की भूमिका प्रसिद्ध कवि सुमित्रानंदन पंत ने लिखी।[5] नेपाली के ये दोनों काव्य-संग्रह छायावाद और उत्तर छायावाद दौर की संक्रान्त परिस्थितियों की देन हैं।

हिन्दी में छायावाद एक विशिष्ट स्थान रखता है। इसका आविर्भाव द्विवेदी युगीन काव्य-धारा की स्थूल बौद्धिकता, इतिवृत्तात्मकता तथा कोरी नैतिकता की प्रतिष्ठा की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ। सभी काव्य-धाराओं की तरह छायावादी काव्यधारा सिर्फ पूर्व की काव्य-धारा की प्रतिक्रिया नहीं थी, बल्कि उसका जन्म भी सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के कारण हुआ था। "छायावाद ने जिस तरह समाज व साहित्य को पुरानी रूढ़ियों से मुक्त किया, उसी तरह आधुनिक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय और मानवतावादी भावनाओं की ओर भी प्रेरित किया। व्यक्तित्व की स्वाधीनता, विराट कल्पना, प्रकृति साहचर्य, मानव प्रेम, वैयक्तिक प्रणय, उच्च नैतिक आदर्श, देशभक्ति, राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन आदि के प्रसार द्वारा छायावाद ने हिन्दी जाति के जीवन में ऐतिहासिक कार्य किया। कविता के रूप विन्यास को पुरानी संकीर्ण रूढ़ियों मुक्त करके उसने नवीन अभिव्यंजना प्रणाली के द्वार खोल दिए।"[6]

यह सच है कि छायावादी कवियों ने अपनी रचनाओं के जरिए सांस्कृतिक परिवेश में यथार्थ उद्घाटित तो किया, लेकिन आधारभूमि मुख्य रूप से कल्पना से भरी हुई, आदर्शात्मक, भावनात्मक एवं रहस्यात्मक ही अधिक रही। छायावादी कविता पर व्यक्तिवादिता हावी होती चली जा रही थी, जिसके फलस्वरूप कविता सामान्य जनता से कटती

चली जा रही थी। वस्तुत: "छायावाद के बीच मौलिकता और नवीनता के नाम पर जो असामान्य की खोज हुई, उसने उसे सामान्य जनता से बहुत दूर कर दिया।"[7] इस प्रकार सामान्य जनता तथा उसकी समस्याओं से दूर, युगीन समाज की आवश्यकता की पूर्ति में असमर्थ, कल्पना और व्यक्तिवादिता के नशे में चूर, रहस्य एवं आध्यात्मिकता की खोल ओढ़े, सामान्य जनता से कटी छायावादी कविता को युग की जागरूक चेतना स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थी। फलत: छायावादी कविता अपने अवसान की ओर अग्रसर हो गई।

अपने अन्तिम समय में छायावादी कविता की कल्पना एवं उसकी रोमानियत अपनी अतिवादिता के चरम उत्कर्ष पर पहुँच गई थी। जीवन एवं समाज की वास्तविकताओं से उसका सम्बन्ध-विच्छेद-सा हो गया था। कविता यथार्थजीवी की जगह कल्पनाजीवी हो गई थी। कवि वस्तुस्थिति को पूर्ण रूप में प्रकट न कर, रहस्य व कल्पना का आवरण पहनाकर उसे उद्घाटित करता था। उसमें भी स्व-अनुभूतियों एवं भावनाओं को ही प्रधानता देता था। इस प्रकार छायावादी कविता की ताजगी, रंगीनी और कल्पना का अतिरेक सन्तुलित चित्रण के अभाव की पूर्ति न कर सका। कवियों की नवीनता और मौलिकता भी बहुत दूर न जा सकी, क्योंकि छायावादी कवि प्रधानत: अपनी ही भावनाओं और अनुभूतियों में डूबा था और इनमें भी अधिकांश भावनाएँ और अनुभूतियाँ न तो बहुत गहरी थीं, न सत्य से सम्बन्धित।"[8] महादेवी वर्मा ने भी स्वीकार किया है कि "छायावाद का पराभव एक तो इस कारण हुआ कि छायावादी कवियों की आध्यात्मिक अनुभूति अपूर्ण और दुर्बोध थी और दूसरी उसमें मानव जीवन को उचित गौरव न देकर उसके प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण के स्थान पर भावनात्मक दृष्टिकोण को अपनाया गया।"[9]

छायावाद युग की बाह्य परिस्थितियाँ भी विडम्बनापूर्ण थीं–एक ओर पराधीनता की बेड़ियाँ कसती जा रही थीं, तो दूसरी ओर क्रांति की आवाज तेज होती जा रही थी। परिस्थितियाँ तेजी से करवट बदल रही थीं। लेकिन छायावादी कविता इन सबसे मुखातिब होने में अक्षम हो रही थी। स्वयं छायावादी कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' और सुमित्रानंदन पंत को यह आभास हो गया कि छायावादी कविता इस नए यथार्थ से सम्पृक्त होने में सक्षम नहीं हो पा रही है। इसलिए कवि पंत ने सन् 1936 में युगान्त की घोषणा की। निराला 'बेला', 'नये पत्ते', 'कुकुरमुत्ता', 'गरम पकौड़े', 'प्रेम-संगीत', 'रानी और कानी', 'मास्को डायलॉग', 'स्फटिक शिला' जैसी कविताएँ लिखकर छायावादी भावबोध से आगे बढ़ने लगे, तो पंत सन् 1936 में युगान्त की घोषणा कर युगवाणी और ग्राम्या द्वारा जन जीवन के सत्य की खोज की ओर उन्मुख हुए। हालाँकि गोपाल सिंह 'नेपाली' को इसका आभास पहले ही हो चुका था। इसलिए स्वाभाविक था, प्रकृति की गोद में फूटा उनका कंठ छायावादी प्रकृति सौन्दर्य से अलग एक नए युग का इन्तजार कर रहा था, जिसमें स्वतंत्रता की कामना हो, स्वतंत्रता के लिए क्रान्ति करने की उमंग हो। यही कारण है कि उन्होंने अपने काव्य-संग्रह 'उमंग' (1934) में छायावाद के उस 'विराग का फन्द' काटकर सोई उमंग को जगाने का प्रयास किया और 'युगान्तर' का इन्तजार करना आरंभ किया। 'नेपाली' ने लिखा है कि "बचपन की बात मैं नहीं करता, पर जब होश आया तो ब्रजभाषा की 'कोमल-कान्त-पदावली' घूँघट काढ़े सामने खड़ी थी। एक-आध को मैंने पसंद किया, गाया भी। पदावली अभी मेरे निश्चय की बाट जोह रही थी कि पीछे से समय ने सीटी दी। मैं मुड़ा, उसकी ओजपूर्ण बातें सुनीं। न कोई मोह, न कुछ लालच; कर्तव्य की ज्योति से उद्भाषित प्रशस्त जीवन मार्ग मैं बड़ा आकृष्ट हुआ। इस नवीन आलोक से मुझे बड़ी खुशी हुई।"[10]

नेपाली ने इस नवीन आलोक की प्रतीक्षा अपने आरंभिक काव्य से ही शुरू कर दी थी।

"अरे युगान्तर, आ जल्दी अब खोल, खोल मेरा बन्धन
बँधा हुआ जंजीरों से तड़प रहा कब से जीवन।"[11]

छायावादी काव्य के सम्बन्ध में यह धारणा प्राय: व्यक्त की जाती है कि प्रस्तुत काव्यधारा युग-प्रतिबिम्बन के उत्तरदायित्व को निभा नहीं पाई, क्योंकि 'स्व' के वृत्त में ही सीमित इस काव्यधारा के कवियों के पास इतना अवकाश कहाँ कि वे युगीन चेतना को अभिव्यक्ति दे पाते ? छायावादी कवि जिस रहस्यमयी दुनिया में खोए हुए थे, नेपाली ने सन् 1934 में प्रकाशित अपने पहले काव्य संग्रह में स्पष्ट कर दिया था कि वह युग समाप्त हो गया, अब युगानुसार नवीन चेतना का साक्षात्कार आवश्यक है।

"तू खोज रहा वह तब का जग
जिसको मग ने कर दिया विलग
अब तो रे जग छवि से जगमग है अमर लोक-सा ही लगभग
हो जा नवीन या हो विलीन
यह तो रे युग जग का नवीन"[12]

उमंग की भूमिका में कवि सुमित्रानंदन पंत ने माना कि "नवयुग का भी आपने मुक्त-हृदय से स्वागत किया है, उससे 'खोल-खोल मेरे बन्धन' कहकर आप सन्तुष्ट नहीं हो गए हैं, प्रत्युत विश्व-व्यापी परिवर्तन भी चाहते हैं।"[13] पन्त

ने उनकी कविता को उद्धृत किया–

आ जा, ला दे कण-कण में अब फिर से ऐसा परिवर्तन
मरता जहाँ आज यह जीवन, वहाँ करे यौवन नर्तन"

आगे चलकर पन्त ने सन् 1936 में प्रकाशित 'युगान्त' में इस बात को दुहराया–

"निष्प्राण विगत-युग! मृतविहंग!
जग-नीड़, शब्द औ' श्वास-हीन,
च्युत, अस्त-व्यस्त पंखों-से तुम
झर-झर अनन्त में हो विलीन!"[14]

छायावादी कविता में दु:ख के बादल छाये हुए थे, 'नीरस विराग का फन्द' उसे जकड़ रखा था। दूसरी तरफ आजादी के लिए चल रहा आन्दोलन एक नई ऊर्जा की माँग कर रहा था। नेपाली ने युगीन यथार्थ का दर्शन कर उस नीरस फन्द को काट सोई उमंग को जगाने का प्रयास किया।

"सोई उमंग उठ जाग-जाग
जीवन से क्यों इतना विराग
x x x
नीरस विराग का काट फन्द
रे खोल हृदय का द्वार बन्द
उकसा-उकसाकर मधुर छन्द बैठी खिड़की में मन्द-मन्द"

हालाँकि स्वयं छायावादी कवियों को भी युग का यथार्थ अपने नीरस छन्द को छोड़ने पर विवश कर रहा था। पन्त ने भी युगान्त में जीर्ण पत्र के जल्दी झड़ने की कामना की–

"द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र!
हे स्रस्त-ध्वस्त! हे शुष्क-शीर्ण!
हिम-ताप-पीत, मधुवात-भीत,
तुम वीत-राग, जड़, पुराचीन!!"[15]

स्वयं महाकवि निराला ने सन् 1930 के पहले भिक्षुक, बादल-राग आदि कविताओं में सामाजिक यथार्थ और राष्ट्रीयता की भावना को अभिव्यक्ति दी और धीरे-धीरे वे प्राकृतिक रहस्यवाद और आध्यात्मिक रहस्यवाद से हट कर मानवतावाद या यथार्थोन्मुख आदर्शवाद की ओर अग्रसर होते गये।

नेपाली नई चेतना का साक्षात्कार कर आभिजात्य की कृत्रिमता को त्याग प्रकृति के उस अंश को कविता में लाते हैं, जिसे अब तक उपेक्षित रखा गया था। उनकी कविता में 'जुही की कली' के स्थान पर 'पीपल के पत्ते', 'बेर' आदि महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। नेपाली ने 'बेर' कविता में आभिजात्य से मुक्त बेर के सहज सौन्दर्य को प्रस्तुत किया है–

"है जंगल में इनका प्रवास
इसलिए नहीं इनमें सुवास
पर बिना किए कुछ भी प्रयास
पा जाते ये कैसे मिठास
करते पसन्द जो धन-कुबेर
देहरादून के मधुर बेर
यदि छोड़ सेव किशमिश अनार
इनको चखने का हो विचार
तो ला-ला वन से बार बार
सुख से अपार यों ही उधार"[16]

नेपाली ने कविता की वस्तु को ही छायावादी आभिजात्य की कृत्रिमता से मुक्त नहीं किया कविता की भाषा को तत्सम शब्दावली से मुक्त कर आमजन की भाषा तक लाने का प्रयास किया।

नेपाली हमेशा नवीनता की कल्पना करते हैं और नए युग का स्वागत करते हैं। वे समाज की घिस गईं तमाम नीतियों, मनुष्य की घिस गईं अतीत रीतियों और कुरीतियों को चुनौती देते हैं। उनकी कविता मानव-मुक्ति तथा राष्ट्र-मुक्ति के लिए नवीन कल्पना करने की प्रेरणा देती है।

संदर्भ सूची :

1. नंदन, नंदकिशोर, गोपाल सिंह नेपाली, युगद्रष्टा कवि, पृ. 15.
2. राय, (डॉ.) सतीश कुमार, गोपाल सिंह 'नेपाली', पृ. 12.
3. वही, पृ. 12-13.
4. वही, पृ. 13.
5. वही, पृ. 13.
6. सिंह, नामवर, छायावाद, पृ. 154.
7. शुक्ला, केसरी नारायण, आधुनिक काव्यधारा का सांस्कृतिक स्रोत, पृ. 133.
8. शुक्ला, केसरी नारायण, आधुनिक काव्यधारा का सांस्कृतिक स्रोत।
9. वर्मा, महादेवी, आधुनिक कवि (एक), पृ. 22-23.
10. नेपाली, गोपाल सिंह, उमंग, भूमिका।
11. वही, पृ. 18.
12. वही, पृ. 16.
13. वही, भूमिका।
14. http://kavitakosh.org/kk/द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र/सुमित्रानंदन पन्त।
15. वही।
16. नेपाली, गोपाल सिंह, उमंग, पृ. 62-63.

❒

ने उनकी कविता को उद्धृत किया–

आ जा, ला दे कण-कण में अब फिर से ऐसा परिवर्तन
मरता जहाँ आज यह जीवन, वहाँ करे यौवन नर्तन"

आगे चलकर पन्त ने सन् 1936 में प्रकाशित 'युगान्त' में इस बात को दुहराया–

"निष्प्राण विगत-युग! मृतविहंग!
जग-नीड़, शब्द औ' श्वास-हीन,
च्युत, अस्त-व्यस्त पंखों-से तुम
झर-झर अनन्त में हो विलीन!"[14]

छायावादी कविता में दु:ख के बादल छाये हुए थे, 'नीरस विराग का फन्द' उसे जकड़ रखा था। दूसरी तरफ आजादी के लिए चल रहा आन्दोलन एक नई ऊर्जा की माँग कर रहा था। नेपाली ने युगीन यथार्थ का दर्शन कर उस नीरस फन्द को काट सोई उमंग को जगाने का प्रयास किया।

"सोई उमंग उठ जाग-जाग
जीवन से क्यों इतना विराग
x x x
नीरस विराग का काट फन्द
रे खोल हृदय का द्वार बन्द
उकसा-उकसाकर मधुर छन्द बैठी खिड़की में मन्द-मन्द"

हालाँकि स्वयं छायावादी कवियों को भी युग का यथार्थ अपने नीरस छन्द को छोड़ने पर विवश कर रहा था। पन्त ने भी युगान्त में जीर्ण पत्र के जल्दी झड़ने की कामना की–

"द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र!
हे स्रस्त-ध्वस्त! हे शुष्क-शीर्ण!
हिम-ताप-पीत, मधुवात-भीत,
तुम वीत-राग, जड़, पुराचीन!!"[15]

स्वयं महाकवि निराला ने सन् 1930 के पहले भिक्षुक, बादल-राग आदि कविताओं में सामाजिक यथार्थ और राष्ट्रीयता की भावना को अभिव्यक्ति दी और धीरे-धीरे वे प्राकृतिक रहस्यवाद और आध्यात्मिक रहस्यवाद से हट कर मानवतावाद या यथार्थोन्मुख आदर्शवाद की ओर अग्रसर होते गये।

नेपाली नई चेतना का साक्षात्कार कर आभिजात्य की कृत्रिमता को त्याग प्रकृति के उस अंश को कविता में लाते हैं, जिसे अब तक उपेक्षित रखा गया था। उनकी कविता में 'जुही की कली' के स्थान पर 'पीपल के पत्ते', 'बेर' आदि महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। नेपाली ने 'बेर' कविता में आभिजात्य से मुक्त बेर के सहज सौन्दर्य को प्रस्तुत किया है–

"है जंगल में इनका प्रवास
इसलिए नहीं इनमें सुवास
पर बिना किए कुछ भी प्रयास
पा जाते ये कैसे मिठास
करते पसन्द जो धन-कुबेर
देहरादून के मधुर बेर
यदि छोड़ सेव किशमिश अनार
इनको चखने का हो विचार
तो ला-ला वन से बार बार
सुख से अपार यों ही उधार"[16]

नेपाली ने कविता की वस्तु को ही छायावादी आभिजात्य की कृत्रिमता से मुक्त नहीं किया कविता की भाषा को तत्सम शब्दावली से मुक्त कर आमजन की भाषा तक लाने का प्रयास किया।

नेपाली हमेशा नवीनता की कल्पना करते हैं और नए युग का स्वागत करते हैं। वे समाज की घिस गईं तमाम नीतियों, मनुष्य की घिस गईं अतीत रीतियों और कुरीतियों को चुनौती देते हैं। उनकी कविता मानव-मुक्ति तथा राष्ट्र-मुक्ति के लिए नवीन कल्पना करने की प्रेरणा देती है।

संदर्भ सूची :

1. नंदन, नंदकिशोर, गोपाल सिंह नेपाली, युगद्रष्टा कवि, पृ. 15.
2. राय, (डॉ.) सतीश कुमार, गोपाल सिंह 'नेपाली', पृ. 12.
3. वही, पृ. 12-13.
4. वही, पृ. 13.
5. वही, पृ. 13.
6. सिंह, नामवर, छायावाद, पृ. 154.
7. शुक्ला, केसरी नारायण, आधुनिक काव्यधारा का सांस्कृतिक स्रोत, पृ. 133.
8. शुक्ला, केसरी नारायण, आधुनिक काव्यधारा का सांस्कृतिक स्रोत।
9. वर्मा, महादेवी, आधुनिक कवि (एक), पृ. 22-23.
10. नेपाली, गोपाल सिंह, उमंग, भूमिका।
11. वही, पृ. 18.
12. वही, पृ. 16.
13. वही, भूमिका।
14. http://kavitakosh.org/kk/द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र/सुमित्रानंदन पन्त।
15. वही।
16. नेपाली, गोपाल सिंह, उमंग, पृ. 62-63.

❐